अष्टांगयोग : एक परिचय

☐ प्रा० अरुण जोशी

आज से कुछ साल पहले योग को गुप्तविद्या मानकर उसकी चर्चा गुरु-शिष्य तक ही सीमित रहती थी किन्तु अब परिस्थिति बदल चुकी है। योग के बारे में भारत में और भारत के बाहर चर्चा होती है। योग के बारे में सच्ची जानकारी देने के लिए यह निबन्ध लिखा गया है।

आसन का अभ्यास और तदनुसार शारीरिक प्रक्रिया करके शरीर को सुदृढ बनाना योग है, ऐसा कोई कहे तो यह भ्रम है। सम्मोहन से किसी पर वशीकरण करना भी योग नहीं है। योग के अभ्यास से प्रारंभ में इस तरह का अनुभव यद्यपि होता है फिर भी यह तो प्रारंभिक दशा का संकेतमात्र है।

योग से ऊर्ध्वीकरण होता है। अज्ञान का नाश होने के बाद शाश्वत तत्त्व ब्रह्म से जो युक्त करे वह योग है। अतएव कहा गया है कि "युज्यते असौ योगः"। अष्टांग-योग का आचरण करने से ज्ञानयोग, कर्मयोग या भक्तियोग सिद्ध करने में सफलता मिलती है। अतः अष्टांगयोग का महत्त्व सर्वमान्य रहा है। यह आचरण करने में कोई सम्प्रदाय या देश या काल की परिस्थिति इसमें बाधक नहीं होती है।

महर्षि पतंञ्जलि ने अष्टांगयोग का अति स्पष्ट चित्र प्रदर्शित किया है। उनके योगसूत्रों में ३० सूत्रों में अष्टांगयोग के विषय में लिखा गया है। पतंजलि के बारे के कहा गया है कि उन्होंने योगशास्त्र की रचना करके हमारे चित्त की भ्रमणा दूर की है, व्याकरण शास्त्र की रचना करके हमारी वाणी को निर्मलता दी है, वैद्यकशास्त्र की रचना करके हमारे शरीर को निर्मल किया है। उनका समय ई. पू. चौथी सदी माना जाता है।

योग के आठ अंग इस प्रकार हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि, अब प्रत्येक के विषय में विस्तृत जानकारी दी जाती है।

१, यम:—यह प्रथम अंग है और इसमें अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पाँच महाव्रतों का समावेश होता है। इन व्रतों का पालन पूर्णरूपेण करने का आदेश है। इन व्रतों को सार्वभौम अर्थात् सर्वदेशीय महाव्रत कहा गया है। इनके पालन से व्यक्ति वैररहित सत्यवादी, सर्व सम्पत्तिशाली, वीर्यवान और जन्मजन्मांतरज्ञाता बन सकता है।

२. **नियम**—नियम द्वितीय अंग है और इसमें शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान का समावेश होता है। शौच से एकाग्रता प्राप्त होने से बुद्धि निर्मल होती है। संतोष से अद्वितीय सुख प्राप्त होता है। तप से शरीर और इन्द्रियों की सिद्धि प्राप्त होती है। स्वाध्याय से इष्टदेव का दर्शन सुलभ होता है। ईश्वरप्रणिधान से समाधि की स्थिति प्राप्त करने में सुविधा प्राप्त होती है।

आसनस्थ तन
आत्मस्थ मन
तब हो सके
आश्वस्त जन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. **आसन**—यह तीसरा अंग है। जिस स्थिति में देह स्थिर रहे और मन प्रसन्नता का अनुभव करे, वह स्थिति आसन है। आसन-सिद्धि से तमस् और रजस् का नाश होता है और सत्त्वगुण का उदय होता है।

४. **प्राणायाम**—यह चतुर्थ अंग है। पूरक, रेचक, कुंभक आदि प्राणायाम के अनेक प्रकार हैं। इस अंग से इन्द्रियों के दोष नष्ट होते हैं।

५. **प्रत्याहार**—यह पांचवां अंग है। इससे इन्द्रियां अन्तर्मुख होती हैं और चित्त के स्वरूप का अनुसरण करती हैं। इस अंग से योगी जितेन्द्रिय बनता है।

६. **धारणा**—यह छठा अंग है। चित्त को स्थिर करने में धारणा सहायक होती है। चित्त के बन्धन को ही धारणा माना गया है।

(७) **ध्यान**—यह सप्तम अंग है। वृत्तियों की एकाग्रता को ध्यान कहा गया है।

(८) **समाधि**—यह अष्टम अंग है। अन्तःप्रकाश रूप इस अंग से मात्र ध्येय का स्फुरण अनुभवगम्य होता है। अष्टांगयोग का यह अंतिम सोपान है।

अष्टांगयोग का अनुष्ठान करने से मानसिक अशुद्धि का नाश होता है। ज्ञान का अनुभव प्राप्त होता है। हृदय प्रकाशित होता है। सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति होती है और दिन-प्रतिदिन उसकी वृद्धि होती है। इस अष्टांगयोग के मार्ग को राजयोग भी कहा जाता है। इस मार्ग पर चलने वाला आध्यात्मिक जीवन में गति करने में सफल होता है।

□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org